Journal of Integrative Science and Societal Impact
July-December 2025 1(1)
https://jissi.org

Original Article

THE INTERRELATIONSHIP BETWEEN COGNITIVE DEVELOPMENT AND STEADFASTNESS

संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञ का अंतर्संबंध

Meenakshi Singh Rawat [1*]
[1] Assistant Professor, Department of Education Uttarakhand, Sanskrit University, Haridwar, India

ABSTRACT

English: Cognitive development refers to the gradual evolution of human mental processes through which individuals develop abilities such as perception, attention, memory, thinking, reasoning, problem-solving, decision-making, and self-regulation. In modern psychology, cognitive development is generally linked to a person's experience, environment, and active mental organization. On the other hand, in the Indian knowledge tradition, human mental development is not simply seen as an increase in intellectual capacity, but is also associated with discernment, self-awareness, self-control, equanimity, and self-control. The Sthithaprajna described in the Bhagavad Gita represents the ideal of a developed mental state in which a person maintains mental balance in the face of dialectical situations such as happiness and sorrow, gain and loss, and love and aversion. The present study is based on a descriptive and analytical literature study. It analyzes the Bhagavad Gita, the Katha Upanishad, the Yoga Sutras, and literature related to modern cognitive and emotional psychology. The aim of the study is to clarify the possible interrelationship between the concepts of cognitive development and Sthithaprajna.

Hindi: ज्ञानात्मक विकास मनुष्य की उन मानसिक प्रक्रियाओं के क्रमिक विकास को संदर्भित करता है, जिनके माध्यम से व्यक्ति प्रत्यक्षीकरण, ध्यान, स्मृति, चिंतन, तर्क, समस्या-समाधान, निर्णय-निर्माण तथा आत्म-नियमन जैसी क्षमताओं का विकास करता है। आधुनिक मनोविज्ञान में संज्ञानात्मक विकास को सामान्यतः व्यक्ति के अनुभव, पर्यावरण तथा सक्रिय मानसिक संगठन के साथ जोड़ा गया है। दूसरी ओर, भारतीय ज्ञान परम्परा में मनुष्य के मानसिक विकास को केवल बौद्धिक क्षमता की वृद्धि के रूप में न देखकर विवेक, आत्मबोध, इन्द्रियनिग्रह, समत्व तथा मनोनिग्रह के साथ संबद्ध किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ ऐसी विकसित मानसिक अवस्था का आदर्श प्रस्तुत करता है, जिसमें व्यक्ति सुख-दुःख, लाभ-हानि तथा राग-द्वेष जैसी द्वंद्वात्मक परिस्थितियों में मानसिक संतुलन बनाए रखता है। प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक साहित्य-अध्ययन पर आधारित है। इसमें श्रीमद्भगवद्गीता, कठोपनिषद्, योगसूत्र तथा आधुनिक संज्ञानात्मक एवं भावनात्मक मनोविज्ञान से संबंधित साहित्य का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता की अवधारणाओं के बीच संभावित अंतर्संबंध को स्पष्ट करना है।

Keywords: Cognitive Development, Equanimity, Self-Awareness, Discernment, Self-Regulation, Equanimity, Indian Wisdom Tradition, Psychology, संज्ञानात्मक विकास, स्थितप्रज्ञता, आत्म-जागरूकता, विवेक, आत्मनियमन, समत्व, भारतीय ज्ञान परम्परा, मनोविज्ञान

*Corresponding Author:
Email address: Meenakshi Singh Rawat (singhmeenakshi2015@gmail.com)

Received: 22 November 2025; **Accepted:** 03 December 2025; **Published** 31 December 2025
DOI: 10.29121/JISSI.v1.i1.2025.102
Page Number: 96-102
Journal Title: Journal of Integrative Science and Societal Impact
Journal Abbreviation: J. Integr. Sci. Soc. Impact
Online ISSN: 3108-2165, **Print ISSN:** 3108-1959
Publisher: Granthaalayah Publications and Printers, India
Conflict of Interests: The authors declare that they have no competing interests.
Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.
Authors' Contributions: Each author made an equal contribution to the conception and design of the study. All authors have reviewed and approved the final version of the manuscript for publication.
Transparency: The authors affirm that this manuscript presents an honest, accurate, and transparent account of the study. All essential aspects have been included, and any deviations from the original study plan have been clearly explained. The writing process strictly adhered to established ethical standards.
Copyright: © 2025 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.
With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

प्रस्तावना

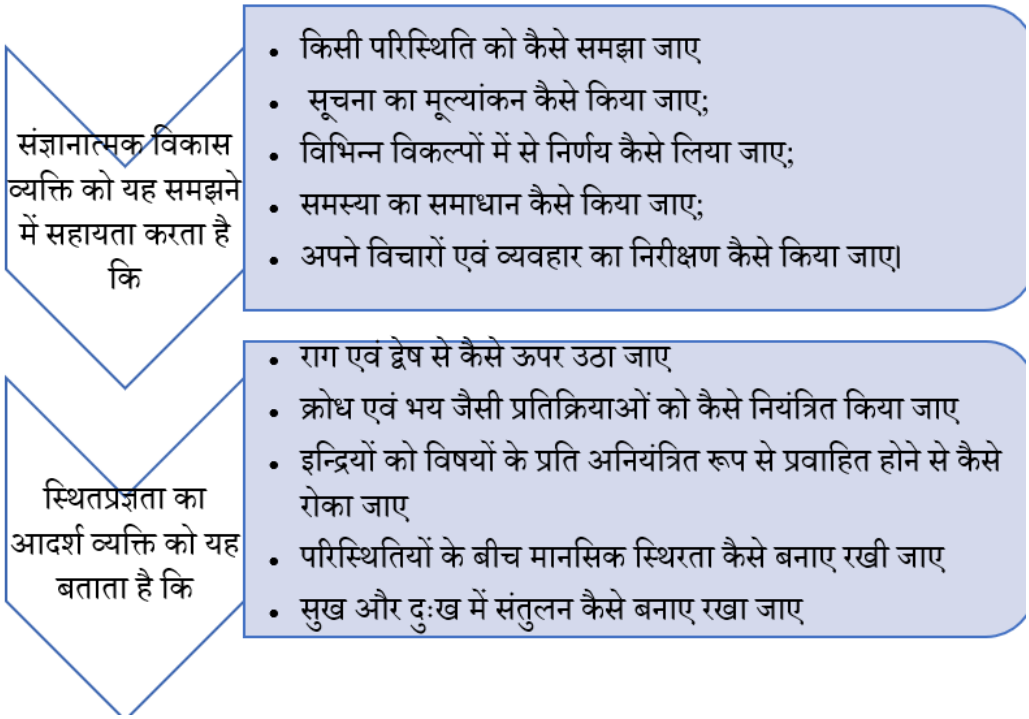
मानव व्यक्तित्व के विकास में संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। व्यक्ति अपने परिवेश से प्राप्त सूचनाओं को ग्रहण करता है, उनका संगठन एवं विश्लेषण करता है तथा पूर्व अनुभवों के आधार पर नई परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया करता है। इस प्रकार संज्ञान केवल ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के चिंतन, निर्णय, व्यवहार और आत्म-नियमन को भी प्रभावित करता है। आधुनिक मनोविज्ञान में संज्ञानात्मक विकास की चर्चा करते हुए जीन पियाजे ने बालक को अपने ज्ञान का सक्रिय निर्माता माना। उनके अनुसार व्यक्ति अपने अनुभवों के साथ अंतःक्रिया करते हुए मानसिक संरचनाओं का निर्माण एवं पुनर्गठन करता है Piaget (1952)। आगे चलकर सूचना-प्रसंस्करण दृष्टिकोण ने ध्यान, स्मृति, कार्यकारी नियंत्रण तथा समस्या-समाधान जैसी प्रक्रियाओं को संज्ञानात्मक विकास के महत्वपूर्ण घटकों के रूप में देखा। भारतीय ज्ञान परम्परा में भी मानव मन, बुद्धि, अहंकार, इन्द्रियों तथा आत्मचेतना के विकास का विस्तृत विवेचन मिलता है। विशेष रूप से श्रीमद्भगवद्गीता में मनुष्य के मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास का एक आदर्श रूप स्थितप्रज्ञता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्रीकृष्ण कहते हैं प्रजहाति यदा कामान् सर्वान्पार्थ मनोगतान्।

आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥

Bhagavad Gita. (n.d.) अर्थात् जब मनुष्य मन में उत्पन्न होने वाली कामनाओं से ऊपर उठकर आत्मा में ही संतुष्टि प्राप्त करता है, तब उसे स्थितप्रज्ञ कहा जाता है। स्थितप्रज्ञता के अंतर्गत मानसिक स्थिरता, आत्म-जागरूकता, भावनात्मक नियंत्रण, विवेकपूर्ण प्रतिक्रिया और परिस्थितियों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण जैसे ऐसे आयाम विद्यमान हैं प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से संज्ञानात्मक विकास एवं स्थितप्रज्ञ के मध्य अंतर्संबंध का अध्ययन किया जा रहा है |

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व

वर्तमान समय में तीव्र सामाजिक परिवर्तन, सूचना की अधिकता, प्रतिस्पर्धा तथा विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक दबावों के कारण व्यक्ति के लिए केवल बौद्धिक रूप से सक्षम होना पर्याप्त नहीं है। उसे अपनी भावनाओं, इच्छाओं तथा प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करने की क्षमता की भी आवश्यकता होती है। इसी संदर्भ में संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता का तुलनात्मक अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है



संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता का तुलनात्मक चित्रण

अध्ययन के उद्देश्य- प्रस्तुत शोधपत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1) संज्ञानात्मक विकास की मनोवैज्ञानिक अवधारणा को स्पष्ट करना।
2) भारतीय ज्ञान परम्परा में स्थितप्रज्ञता की अवधारणा का विश्लेषण करना।
3) श्रीमद्भगवद्गीता में स्थितप्रज्ञता से संबंधित प्रमुख अवधारणाओं का अध्ययन करना।
4) संज्ञानात्मक विकास एवं स्थितप्रज्ञता के समान तथा भिन्न आयामों को स्पष्ट करना।

5) आत्म-जागरूकता, विवेक, आत्मनियमन एवं समत्व को दोनों अवधारणाओं के मध्य संभावित सेतु के रूप में विश्लेषित करना।

6) उपलब्ध साहित्य के आधार पर स्थितप्रज्ञता की मनोवैज्ञानिक प्रासंगिकता को स्पष्ट करना।

शोध-पद्धति एवं शोध अध्ययन: प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं साहित्य-आधारित शोध-पद्धति पर आधारित है। इस अध्ययन में आधुनिक मनोवैज्ञानिक साहित्य एवं भारतीय मनोविज्ञान संबंधी अकादमिक साहित्य का अध्ययन निम्नवत है -

Piaget, J. (1952): इनके द्वारा द ऑरिजिन्स ऑफ इंटेलिजेन्स इन चिल्ड्रन पर सैद्धान्तिक एवं विकासात्मक मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया गया । जीन पियाजे ने बालक के बौद्धिक एवं संज्ञानात्मक विकास को विकासात्मक मनोविज्ञान के प्रमुख विषय के रूप में स्थापित कर स्पष्ट किया की बुद्धि जन्म के समय पूर्ण विकसित अवस्था में उपस्थित नहीं होती, बल्कि बालक और उसके पर्यावरण के बीच निरंतर अंत:क्रिया के परिणामस्वरूप उसका क्रमिक विकास होता है। इस कार्य में विशेष रूप से शैशवावस्था के संवेदी-गत्यात्मक व्यवहारों, प्रतिवर्तों तथा प्रारम्भिक आदतों को बुद्धि के विकास की आधारभूमि के रूप में देखा गया है। पियाजे के दृष्टिकोण में संज्ञानात्मक विकास केवल सूचना प्राप्त करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि व्यक्ति द्वारा अपने अनुभवों को व्यवस्थित करने तथा पर्यावरण के साथ अनुकूलन स्थापित करने की प्रक्रिया है। इस दृष्टि से संज्ञानात्मक विकास में अनुभव, बौद्धिक संरचनाएँ, समस्या-समाधान तथा अनुकूलन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

Vygotsky (1978) इनके द्वारा माइंड इन सोसाइटी: द डेवलपमेंट ऑफ हायर साइकोलॉजिकल पर सामाजिक-सांस्कृतिक एवं संज्ञानात्मक विकास का सैद्धान्तिक अध्ययन किया गया । लेव वाइगोत्स्की ने संज्ञानात्मक विकास को केवल व्यक्ति के भीतर होने वाली जैविक प्रक्रिया के रूप में न देखकर सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश से संबद्ध प्रक्रिया के रूप में समझाया। वाइगोत्स्की के अनुसार व्यक्ति का मानसिक विकास सामाजिक अंत:क्रियाओं तथा सांस्कृतिक उपकरणों के माध्यम से प्रभावित होता है। भाषा एवं सामाजिक अनुभव व्यक्ति की उच्चतर मानसिक प्रक्रियाओं के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

फ्लैवेल Flavell (1979)**:** इनके द्वारा मेटाकॉग्निशन एंड कॉग्निटिव मॉनिटरिंग: ए न्यू एरिया ऑफ कॉग्निटिव-डेवलपमेंटल इन्क्वायरी पर संज्ञानात्मक-विकासात्मक सैद्धान्तिक अध्ययन किया गया । इन्होने अधिसंज्ञान को संज्ञानात्मक विकास के एक महत्वपूर्ण आयाम के रूप में प्रस्तुत किया। अधिसंज्ञान का अर्थ व्यक्ति की अपनी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के संबंध में उसकी जानकारी तथा उन प्रक्रियाओं की निगरानी और नियंत्रण की क्षमता से है। व्यक्ति यह समझने लगता है कि वह किस प्रकार सीखता है, उसकी स्मृति और समझ किस प्रकार कार्य करती है तथा किसी बौद्धिक कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए किस रणनीति का उपयोग किया जाना चाहिए।

पांडे एवं नायडू Pande & Naidu (1992)**:** इनके द्वारा अनासक्ति एंड हेल्थ: अ स्टडी ऑफ नॉन-अटैचमेंट पर अध्ययन कर भारतीय ज्ञान परम्परा की अनासक्ति की अवधारणा को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से समझने का प्रयास किया गया। अध्ययन में अनासक्ति को मापने के लिए निर्मित मापनी को भगवद्गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ व्यक्ति के गुणों के आधार पर विकसित किया गया था। अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यह परीक्षण करना था कि उच्च अनासक्ति वाले व्यक्तियों में तनावपूर्ण जीवन-घटनाओं की स्थिति में मानसिक कष्ट तथा तनाव से संबंधित स्वास्थ्य-लक्षण कम पाए जाते हैं या नहीं। अध्ययन में यह पाया गया कि उच्च अनासक्ति वाले प्रतिभागियों में कम मानसिक कष्ट तथा स्वास्थ्य संबंधी तनाव-लक्षण पाए गए। अनासक्ति तनाव-लक्षणों का महत्वपूर्ण पूर्वानुमानकर्ता भी पाई गई।

जिजिना, वासा एवं नंदा बिस्वास Jijina et al. (2020)**:** इनके द्वारा कन्स्ट्रक्ट डिस्क्रिप्शन ऑफ समत्व फ्रॉम द भगवद्गीता: इम्प्लिकेशन्स फॉर होलिस्टिक वेल-बीइंग पर अध्ययन किया गया | अध्ययन का उद्देश्य भगवद्गीता में वर्णित समत्व को एक स्वदेशी मनोवैज्ञानिक संरचना के रूप में स्पष्ट करना था। शोधकर्ताओं ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि भारतीय संदर्भ में मनोवैज्ञानिक कल्याण के अध्ययन के लिए भारतीय ज्ञान परम्परा से विकसित अवधारणाओं का अध्ययन आवश्यक है। अध्ययन में भगवद्गीता के 18 अध्यायों के लगभग 700 श्लोकों का पाठ-विश्लेषण किया गया। भाषिक विश्लेषण, विषय-वस्तु विश्लेषण, संदर्भ-विश्लेषण तथा विषयगत विश्लेषण की सहायता से समत्व से संबंधित 41 मूल श्लोकों की पहचान की गई। इसके पश्चात् इन श्लोकों के आधार पर समत्व के प्रमुख आयामों को विकसित किया गया। अध्ययन में समत्व के प्रमुख आयामों में समदृष्टि, द्वन्द्वों से ऊपर उठना, वस्तुओं एवं अनुभवों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण, पारस्परिक संबंध, अनुभव की क्षणभंगुरता की समझ तथा संज्ञानात्मक-भावात्मक विकास की प्रक्रियाओं को रेखांकित किया गया।

मैत्रा Maitra (2022) इनके द्वारा कॉन्शसनेस एंड अटेंशन इन द भगवद्गीता पर अध्ययन किया गया इसमें इन्होंने भगवद्गीता में चेतना और ध्यान की अवधारणा का दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया। अध्ययन का मुख्य प्रश्न यह था कि भगवद्गीता में चेतना की किस प्रकार की अवधारणा प्रस्तुत होती है तथा योग और ध्यान के संदर्भ में ध्यान/अवधान की क्या भूमिका है। अध्ययन में यह विश्लेषित किया गया कि भगवद्गीता में योग के संदर्भ में ध्यान किस प्रकार चेतना से जुड़ता है। इसमें आत्म, चेतना तथा ध्यान के बीच संबंध पर दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत किया गया है ।

लांबा, जगदीश एवं देशपांडे Lamba et al. (2023) इनके द्वारा इमोशनल इंटेलिजेन्स ऐज़ द कोर ऑफ इंटेलिजेन्स: अ पर्सपेक्टिव बेस्ड ऑन द भगवद्गीता पर अध्ययन किया गया | अध्ययन में भगवद्गीता के संदर्भ में भावनात्मक बुद्धिमत्ता तथा बुद्धि की अवधारणा का विश्लेषण किया गया। शोधकर्ताओं ने भगवद्गीता में वर्णित स्थिर बुद्धि, आत्म-जागरूकता, इन्द्रिय-नियंत्रण तथा मन के नियमन को भावनात्मक बुद्धिमत्ता के आधुनिक विचारों के साथ संबद्ध किया। अध्ययन का केंद्रीय विचार यह है कि केवल बौद्धिक क्षमता पर्याप्त नहीं है; व्यक्ति के व्यवहार और निर्णयों के लिए अपनी भावनाओं, इच्छाओं और इन्द्रियों का नियमन भी महत्वपूर्ण है। भगवद्गीता के संदर्भ में अनियंत्रित इन्द्रियों तथा असंयमित मन को बुद्धि के विचलन से जोड़ा गया है, जबकि नियंत्रित मन और आत्म-जागरूकता को स्थिर बुद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण माना गया है।

ढिल्लों Dhillon (2023) इनके द्वारा वीविंग टुगेदर द एन्शिएंट एंड द कंटेम्पररी: इंटरसेक्शन्स ऑफ द भगवद्गीता विद मॉडर्न साइकोलॉजी पर अध्ययन किया गया अध्ययन का उद्देश्य यह देखना था कि मनोवैज्ञानिकों ने भगवद्गीता को किस प्रकार समझा है तथा गीता में निहित अवधारणाएँ आधुनिक मानसिक स्वास्थ्य एवं कल्याण के अध्ययन में किस प्रकार उपयोगी हो सकती हैं। लेख में 2012 से 2022 के बीच प्रकाशित 24 मनोवैज्ञानिक रूप से महत्वपूर्ण लेखों की समीक्षा की गई। समीक्षा से तीन प्रमुख क्षेत्र सामने आए आधुनिक मनोचिकित्सकीय अवधारणाओं के साथ गीता की तुलना, आधुनिक मनोवैज्ञानिक अवधारणाओं के पूर्वरूप के रूप में गीता की अवधारणाएँ, तथा कल्याण एवं मानसिक दृढ़ता के विकास में गीता की संभावित उपयोगिता। निष्कर्ष में पाया कि भगवद्गीता और आधुनिक मनोविज्ञान के बीच अनेक वैचारिक अंतर्संबंध पाए गए, विशेषत: मानसिक कल्याण, आत्म-नियमन, मानसिक दृढ़ता तथा मनोवैज्ञानिक विकास के संदर्भ में।

गावड़े Gawade (2023) इनके द्वारा एक्सप्लोरिंग इमोशनल रेगुलेशन इन द भगवद्गीता: साइकोलॉजिकल कॉन्सेप्ट्स एंड प्रेज़ेंट रेलेवन्स में भगवद्गीता में वर्णित भावनात्मक नियमन से संबंधित विचारों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया। अध्ययन में भावनात्मक नियमन को आधुनिक मनोविज्ञान में मानसिक स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण

घटक माना गया और यह देखने का प्रयास किया गया कि भगवद्गीता की शिक्षाएँ भावनाओं के नियंत्रण एवं निर्देशन से किस प्रकार संबंधित हैं। अध्ययन में आत्म-जागरूकता, सजगता तथा भावनात्मक नियमन को प्रमुख अवधारणाओं के रूप में लिया गया। भगवद्गीता के विभिन्न विचारों को आधुनिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के साथ संबद्ध किया गया।

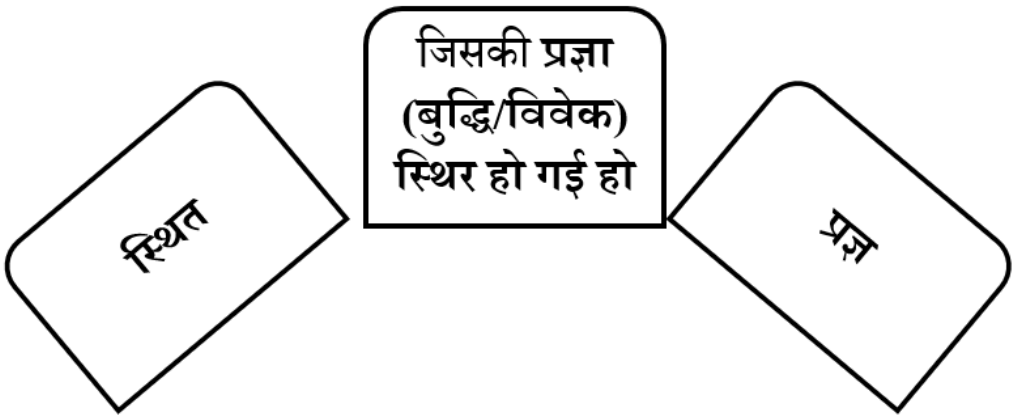
जोशी एवं साहू Joshi & Sahu (2023) इनके द्वारा साइकोलॉजिकल वेल-बीइंग फ्रॉम द पर्सपेक्टिव ऑफ भगवद्गीता में भगवद्गीता के परिप्रेक्ष्य में मनोवैज्ञानिक कल्याण का अध्ययन किया है । शोध में अर्जुन की मानसिक अवस्था को मनोवैज्ञानिक संकट के उदाहरण के रूप में देखा गया तथा श्रीकृष्ण द्वारा दिए गए मार्गदर्शन को मानसिक संतुलन एवं कल्याण के संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया। इसमें अर्जुन में दिखाई देने वाले भय, शारीरिक तनाव-लक्षण, मानसिक भ्रम तथा भावनात्मक संकट का उल्लेख किया और बताया कि भगवद्गीता में इन स्थितियों से निपटने के लिए बौद्धिक समत्व, इच्छा एवं भावनाओं के नियंत्रण तथा सकारात्मक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण किस प्रकार उपयोगी है।

चटर्जी Chatterjee (2024)**:** इनके द्वारा अ क्रिटिकल एनालिसिस ऑफ द साइकोलॉजिकल कॉन्सेप्ट्स इन द भगवद्गीता में भगवद्गीता में अंतर्निहित मनोवैज्ञानिक अवधारणाओं का आलोचनात्मक एवं व्यवस्थित विश्लेषण किया। अध्ययन में आत्मा, चेतना, इच्छाएँ, भावनाएँ, मानसिक संतुलन, नैतिकता, कर्तव्य तथा आध्यात्मिकता जैसी अवधारणाओं की पहचान की गई। इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यह देखना था कि भगवद्गीता में प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक विचार आधुनिक मनोविज्ञान की अवधारणाओं के साथ किस प्रकार संबद्ध किए जा सकते हैं।

मांझी, यादव एवं गौड़ा Manjhi et al. (2024)**:** इनके द्वारा अ कॉन्सेप्चुअल फ्रेम ऑफ रेफरेंस फॉर कॉग्निटिव बिहेवियरल थेरेपी फ्रॉम भगवद्गीता में भगवद्गीता और संज्ञानात्मक-व्यवहारात्मक चिकित्सा के बीच वैचारिक संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। अध्ययन में भगवद्गीता के 18 अध्यायों के 700 श्लोकों को आधार बनाकर मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक वैचारिक ढाँचा प्रस्तुत किया गया। अध्ययन में विशेष रूप से मन पर नियंत्रण, तर्कपूर्ण चिंतन, वर्तमान वास्तविकता की स्वीकृति, कर्तव्य, भक्ति, मानसिक दृढ़ता तथा मूल्य-आधारित कार्य को संज्ञानात्मक-व्यवहारात्मक दृष्टिकोण के साथ जोड़ा गया है ।

संज्ञानात्मक विकास- संज्ञानात्मक विकास से आशय व्यक्ति की उन मानसिक क्षमताओं के क्रमिक विकास से है जिनके माध्यम से वह अपने परिवेश को समझता, अनुभवों को व्यवस्थित करता, समस्याओं का समाधान करता, निर्णय लेता और नई परिस्थितियों के अनुरूप अपने विचारों में परिवर्तन करता है। पियाजे के अनुसार बालक की बुद्धि स्थिर नहीं होती, बल्कि विकास के साथ उसकी मानसिक संरचनाओं में क्रमिक परिवर्तन होता है। व्यक्ति अनुभवों के साथ अंतःक्रिया करते हुए अपने ज्ञान और मानसिक संरचनाओं का संगठन करता है Piaget (1952)। वाइगोत्स्की ने संज्ञानात्मक विकास को सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ से जोड़ा। उनके अनुसार उच्चतर मानसिक प्रक्रियाओं का विकास सामाजिक अंतःक्रिया, भाषा और सांस्कृतिक उपकरणों के माध्यम से होता है Vygotsky (1978)।

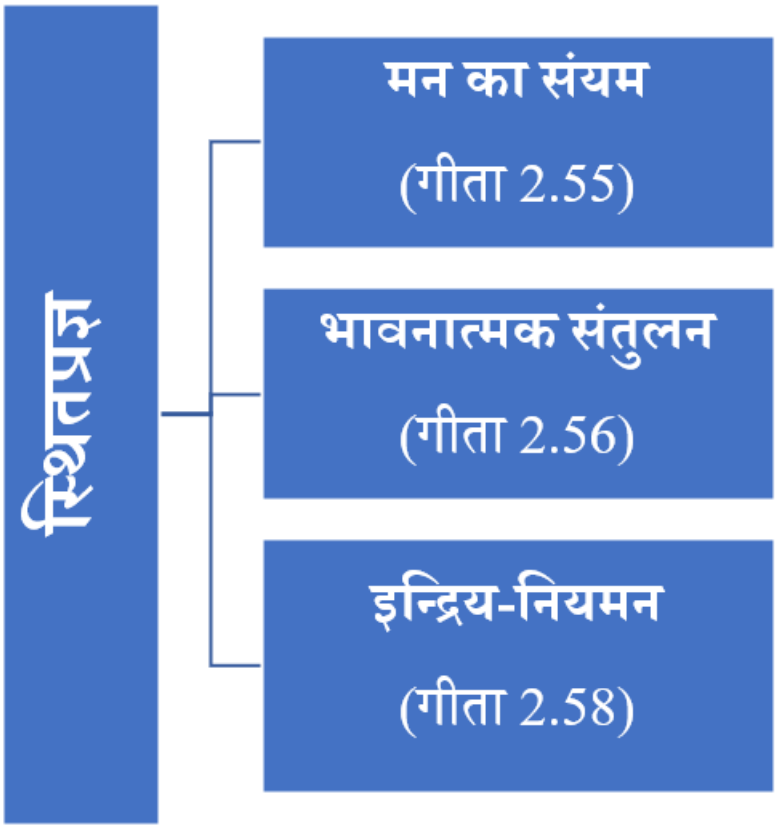
फ्लैवेल ने संज्ञानात्मक विकास में अधिसंज्ञान को विशेष महत्त्व दिया। अधिसंज्ञान का अर्थ है—व्यक्ति का अपनी ही संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के प्रति जागरूक होना तथा उनका निरीक्षण और नियंत्रण करना Flavell (1979)।



स्थितप्रज्ञ- स्थितप्रज्ञ' दो शब्दों से बना है — जो बाहरी परिस्थितियों, इच्छाओं, सुख-दुःख और इन्द्रिय-विषयों के कारण अपने मानसिक संतुलन को बार-बार न खोए उसे स्थितप्रज्ञ कहा जाता है । श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय (गीता 2.54) में अर्जुन पूछते हैं –

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव। स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम्॥

अर्थात् हे केशव! जिसकी बुद्धि स्थिर है, ऐसे समाधिस्थ पुरुष की क्या पहचान है? वह कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे व्यवहार करता है? अर्जुन के इस प्रश्न के उत्तर में श्रीकृष्ण स्थितप्रज्ञ व्यक्ति के बाहरी व्यवहार के साथ-साथ उसकी आंतरिक मानसिक एवं बौद्धिक अवस्था का भी वर्णन करते हैं । वे बताते हैं कि स्थितप्रज्ञ व्यक्ति वह है जिसकी बुद्धि स्थिर होती है और जो कामनाओं, सुख-दुःख, राग, भय, क्रोध तथा इन्द्रिय-विषयों के प्रभाव में आकर अपने मानसिक संतुलन को नहीं खोता ।



श्रीकृष्ण कहते हैं कि-

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान्पार्थ मनोगतान्। आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥ (गीता 2.55) जब व्यक्ति मन में उठने वाली असंयमित और निरन्तर परेशान करने वाली कामनाओं के प्रभाव से मुक्त होकर अपने आत्मस्वरूप में संतुष्ट रहने लगता है, तब उसे स्थितप्रज्ञ कहा जाता है।

इसके बाद श्रीकृष्ण स्थितप्रज्ञ के मानसिक संतुलन को स्पष्ट करते हैं -

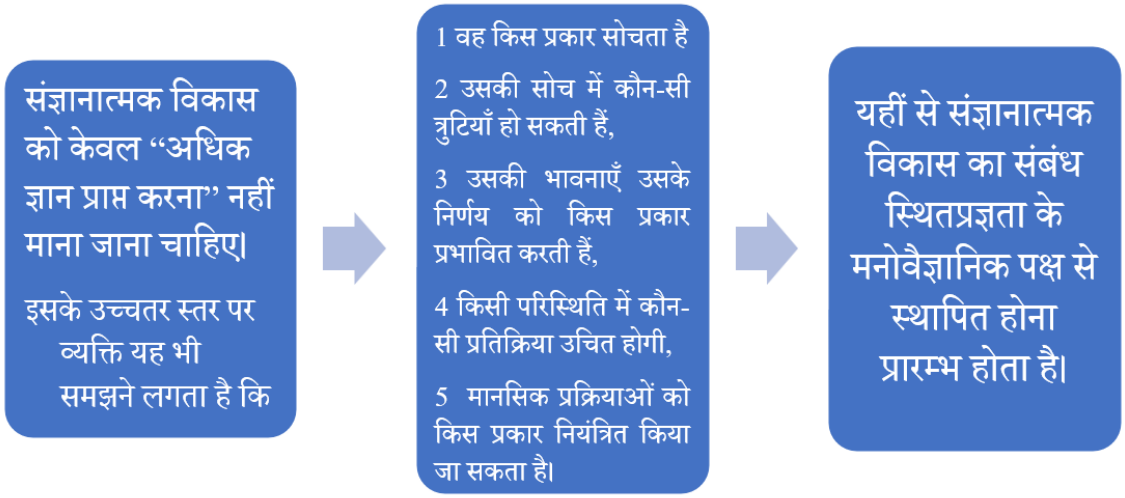
दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः। वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥

(गीता 2.56) स्थितप्रज्ञ व्यक्ति भी दुःख को अनुभव करता है, लेकिन दुःख उसके विवेक को नष्ट नहीं करता। वह दुःख की स्थिति में भी सोचने और उचित निर्णय लेने की क्षमता बनाए रखता है। सुख प्राप्त होने पर वह सुख में इतना नहीं डूब जाता कि उसे खोने का भय सताने लगे या वह उसी सुख को बार-बार पाने के लिए अनुचित कार्य करने लगे। स्थितप्रज्ञ व्यक्ति भावनाहीन नहीं, बल्कि भावनाओं पर विवेकपूर्ण नियंत्रण रखने वाला व्यक्ति है।

मन को स्थिर रखने के लिए श्रीकृष्ण इन्द्रिय-संयम की बात करते हैं –

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥

(गीता 2.58) यहाँ श्रीकृष्ण कछुए का उदाहरण देते हैं जैसे कछुआ आवश्यकता पड़ने पर अपने पैर और अन्य अंगों को भीतर समेट लेता है और आवश्यकता होने पर पुनः बाहर निकालता है, उसी प्रकार स्थितप्रज्ञ व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को आवश्यकतानुसार विषयों से हटाने में सक्षम होता है। स्थितप्रज्ञ व्यक्ति यह तय कर सकता है कि किस विषय पर कितना ध्यान देना है और कब अपने मन को उससे हटाना है। संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता के बीच अंतर्संबंध को प्रस्तुत चित्र द्वारा समझा जा सकता है की संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता में किस प्रकार का सम्बन्धी स्थापित होता है -



निष्कर्ष

संज्ञानात्मक विकास और स्थितप्रज्ञता दो अलग-अलग ज्ञान-परम्पराओं से संबंधित अवधारणाएँ हैं। संज्ञानात्मक विकास आधुनिक मनोविज्ञान में व्यक्ति की चिन्तन, तर्क, स्मृति, ध्यान, समस्या-समाधान, निर्णय-निर्माण तथा अपनी मानसिक प्रक्रियाओं को समझने और नियंत्रित करने की क्षमता के क्रमिक विकास को व्यक्त करता है। इसके विपरीत, भारतीय ज्ञान परम्परा में स्थितप्रज्ञता ऐसी मानसिक अवस्था को व्यक्त करती है जिसमें व्यक्ति सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान तथा अन्य द्वन्द्वों के बीच मानसिक संतुलन बनाए रखते हुए विवेकपूर्ण एवं आत्मनियंत्रित व्यवहार करता है। इस प्रकार, दोनों अवधारणाएँ समान नहीं हैं, परंतु इनके बीच आत्म-जागरूकता, विवेक, ध्यान-नियंत्रण, आत्म-नियमन, भावनात्मक संतुलन और निर्णय-क्षमता जैसे महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक सेतु दिखाई देते हैं।

ACKNOWLEDGMENTS
None.

REFERENCES

Bhagavad Gita. (n.d.). Shrimad Bhagavad Gita, Chapter 2, Verses 55, 56, and 58 (श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 55, 56 एवं 58).

Chatterjee, D. (2024). A critical analysis of the psychological concepts in the Bhagavad Gita (भगवद्गीता में मनोवैज्ञानिक अवधारणाओं का आलोचनात्मक विश्लेषण). International Journal of Indian Psychology, 12(2), 1968–1974. https://doi.org/10.25215/1202.170

Dhillon, M. (2023). Weaving together the ancient and the contemporary: Intersections of the Bhagavad Gita with modern psychology (प्राचीन और समकालीन विचारों का समन्वय: भगवद्गीता और आधुनिक मनोविज्ञान के अंतर्संबंध). Pastoral Psychology, 72, 525–537. https://doi.org/10.1007/s11089-023-01070-2

Flavell, J. H. (1979). Metacognition and cognitive monitoring: A new area of cognitive-developmental inquiry (अधिसंज्ञान और संज्ञानात्मक निगरानी: संज्ञानात्मक-विकासात्मक अनुसंधान का एक नया क्षेत्र). American Psychologist, 34(10), 906–911. https://doi.org/10.1037/0003-066X.34.10.906

Gawade, S. S. (2023). Exploring emotional regulation in the Bhagavad Gita: Psychological concepts and present relevance (भगवद्गीता में भावनात्मक विनियमन का अध्ययन: मनोवैज्ञानिक अवधारणाएँ और वर्तमान प्रासंगिकता). International Journal of Indian Psychology, 11(4), 2733–2742. https://doi.org/10.25215/1104.257

Jijina, P., Vasa, V., & Nanda Biswas, U. (2020). Construct description of samatva from the Bhagavad Gita: Implications for holistic well-being (भगवद्गीता में समत्व की अवधारणा का वर्णन: समग्र कल्याण के लिए निहितार्थ). Purushartha: A Journal of Management, Ethics and Spirituality, 13(1). https://doi.org/10.21844/16202013101

Joshi, P., & Sahu, K. P. (2023). Psychological well-being from the perspective of Bhagavad Gita (भगवद्गीता के दृष्टिकोण से मनोवैज्ञानिक कल्याण). International Journal of Indian Psychology, 11(4), 480–485. https://doi.org/10.25215/1104.040

Lamba, S. V., Jagdish, M., & Deshpande, A. (2023). Emotional intelligence as the core of intelligence: A perspective based on the Bhagavad Gita (बुद्धिमत्ता के मूल आधार के रूप में भावनात्मक बुद्धिमत्ता: भगवद्गीता पर आधारित एक दृष्टिकोण). Pastoral Psychology, 72, 65–83. https://doi.org/10.1007/s11089-022-01032-0

Maitra, K. (2022). Consciousness and attention in the Bhagavad Gita (भगवद्गीता में चेतना और ध्यान). Journal of the American Philosophical Association, 8(2), 191–207. https://doi.org/10.1017/apa.2020.23

Manjhi, P., Yadav, N., & Gowda, P. (2024). A conceptual frame of reference for cognitive behavioral therapy from Bhagavad Gita (भगवद्गीता के आधार पर संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के लिए एक वैचारिक संदर्भ ढाँचा). Journal of Propulsion Technology, 45(3). https://doi.org/10.52783/tjjpt.v45.i03.7848

Pande, N., & Naidu, R. K. (1992). Anasakti and health: A study of non-attachment (अनासक्ति और स्वास्थ्य: अनासक्ति का एक अध्ययन). Psychology & Developing Societies, 4(1), 89–104. https://doi.org/10.1177/097133369200400106

Piaget, J. (1952). The origins of intelligence in children (बच्चों में बुद्धि की उत्पत्ति) (M. Cook, Trans.). International Universities Press.

Vygotsky, L. S. (1978). Mind in society: The development of higher psychological processes (समाज में मन: उच्चतर मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का विकास). Harvard University Press.